शोध मंथन Vol. XII No.IV Oct.-Dec. 2021 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

भारत व पर्वतीय राज्यः एक विहंगावलोकन

प्राप्तिः 27.08.2021
स्वीकृतः 31.08.2021

डा० महेन्द्र कुमार शर्मा
संविदा व्याख्याता, राजनीति विज्ञान विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंगापुर सिटी,
सवाई माधौपुर, राजस्थान–भारत
ईमेलः *mahendrabari108@gmail.com*

सारांश

वैसे तो विद्वानों ने भारत की पर्वतीय राज्यों के प्रति नीति के बारे में कई मत व्यक्त किये हैं लेकिन उनमें कुछ महत्वपूर्ण मतों को प्रस्तुत करना और उसका सही विश्लेषण की प्रक्रिया स्वयं में एक सार्थक कार्य है। एक दृष्टिकोण जो सामने आया है वह भारत विरोधी तो है लेकिन उसके पक्ष में तर्क कुछ प्रासंगिक हैं तो उन्हें ग्रहण अवश्य करना चाहिये। इस दृष्टिकोण के अनुसार भारत जो बाहरी देश के तीन सौ वर्ष अधीन रहा उसने उपनिवेशवाद की नीति को विभिन्न पर्वतीय राज्यों के साथ संधियों को दुहरा कर उस आधिपत्य की भावना को क्यों और कैसे संतुष्ट किया? भारत की नीति सैद्धान्तिक दृष्टि से कुछ भी और कैसी भी नैतिकता युक्त है लेकिन उसका व्यावहारिक पक्ष अंग्रेजों की नीति से समतुल्य माना जा सकता है। आवरण में आधिपत्य रहा आये यह भारत की नीति का अंग रहा है। नैपाल, भूटान तथा सिक्किम के साथ अलग–अलग संधियों की प्रकृति तथा स्वरूप इस तर्क की पुष्टि करते हैं कि भारत की प्रछन्न आकांक्षा वही बनी रही जिसके 1947 से पूर्व हम आलोचक थे। भारत की स्वयं अन्तर्राष्ट्रीय छवि एक मध्यम शक्ति के रूप में उभरी यद्यपि भारत के सामने आन्तरिक तथा बाध्य दिक्कतें हमेशा बनी रही। भारत के स्वयं के राष्ट्रीय हितों के कारण पर्वतीय नीति में कोई परिवर्तन नही आ पाया। भारत का सर्वोपरि राष्ट्रीय हित स्वयं की सुरक्षा। तीनों पर्वतीय राज्यों से भौगोलिक दृष्टि से जुड़ा हुआ चीन ही महत्त्वपूर्ण तत्व रहा जिसके कारण अंग्रेजों की नीति को लगभग ज्यों का त्यों अपना लिया गया। यह प्रश्न भूटान के दृष्टिकोण या अन्य पर्वतीय राज्यों के दृष्टिकोण से अभी भी बना हुआ है कि भारत जैसा जनतांत्रिक देश जिसने बड़े संघर्ष के साथ विदेशी शासकों से स्वतंत्रता प्राप्त की उसने वैसा व्यवहार करना क्यों उचित समझा जो कोई उपनिवेश भावना से कोई देश करता है।

मूल शब्द

आधिपत्य, पर्वतीय, बुर्जुआ गोरखालैण्ड, आकाक्षाओं, निर्भरता एकरूपता, सार्वभौमिकता, एशियायी, कन्याकुमारी, ताशकंद, हिमालयीय शान्ति का क्षेत्र।

प्रस्तावना

यहां यह प्रश्न आकर ठहर जाता है और उसका उत्तर मिलना कठिन भी है। दो देश के राष्ट्रीय हितों के बीच टकराहट हो तो एक सीधा हल निकलना तो मुश्किल है। यह बात दूसरी है कि सामान्य संबंधों को रखने के लिये अन्य विकल्प की तलाश है। 1947 से और आज तक प्रमुख

राष्ट्रीय हित में भारत–भूटान के बीच टकराहट रही है। संधि 1949 की धारा दो भूटान के लिये उस समय की आपत्तिजनक थी जब संधि पर हस्ताक्षर किये थे और आज भी। ज्यों–ज्यों भूटान अपनी अन्तर्राष्ट्रीय आकांक्षाओं की पूर्ति उत्तरोत्तर कर रहा है उसी गति से धारा दो उनके लिये अखरने वाली है। पर्वतीय राज्यों को मजबूरन उसी व्यवहार को अपनाना पड़ा जो भारत के उद्देश्य तथा आकांक्षाओं की पूर्ति करने वाले थे। भारत की सन्नहित कमजोरियां दो प्रकार से सामने आई। एक तो पर्वतीय नीति में विषमताऐं थीं और दूसरी चीन से निरन्तर शंका तथा भय। पर्वतीय राज्यों के लिये मुख्य देश भारत ही रह गया जिनके साथ अलग–अलग संधियां की और उन शर्तों से बंध गये जो उसमें उल्लेख है। नैपाल–भूटान–सिक्किम तीनों ही अपने–अपने तरीके से भारत के साथ नियंत्रित हो गये जो उनकी मजबूरी थी लेकिन स्वेच्छा नहीं। यदि न्यायसंगत होकर और तटस्थ होकर भारत के किसी नागरिक या सरकारी अधिकारी वर्ग से यह पूछा जाये कि जो कुछ पर्वतीय राज्यों के साथ राजनीतिक समझौते हुए (जिनको संधियों की संज्ञा दी गई है) वे क्या न्याय युक्त थे तो शायद उत्तर यही मिलेगा कि विभिन्न राज्यों की तत्कालीन परिस्थिति की विवशता का अनुचित लाभ लिया गया। यह बात दूसरी है कि अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों के सैद्धान्तिक व व्यावहारिक पक्ष भारत की ओर ही भुक्त जायेंगे क्योंकि राजनीति में नैतिकता की संज्ञा राष्ट्रीय हित है। लेकिन यह पक्ष या दृष्टिकोण समस्त पर्वतीय राज्यों की ओर से है और आज जो नैपाल व भूटान का उठता हुआ असंतोष व निराशा जो भारत के प्रति शुरू हुई है उसी का परिणाम है। नैपाल के साथ 1950 में की गई संधि का व्यावहारिक पक्ष इतनी लंबी अवधि के बाद जो उभर कर आया है वह यह कि आर्थिक क्षेत्र में नैपाल भारत के व्यापारियों के हाथों में नियंत्रित है। भारत के पहुँचे बुर्जुआ वर्ग वहां के स्थानीय बुर्ज आश्रों पर हावी हैं और उनको स्वतंत्र रूप से पनपने का अवसर प्रदान नहीं कर पा रहे है। गोरखालैंड की समस्या भी आर्थिक कारणों से उत्पन्न हुई है।

1949 या 1980 की संधियों के बाद से भारत का नेपाल या भूटान पर आधिपत्य या नियंत्रण चतुराई पूर्ण नीतियों के कारण बढ़ा है। जब कभी भी नैपाल ने अपनी सीमा के अतिरिक्त स्वतंत्रता को उभारने का प्रयत्न किया है तो भारत सरकार अपने राष्ट्रीय हितों की परिधि के अन्तर्गत ने उस पर नियंत्रण किया है।

दक्षिण एशिया में भारत का वर्चस्व कम न हो इस दिशा में निरन्तर प्रयास किया है। इस तथ्य से मुंह मोड़ सकते कि भारत ने दक्षिण एरिया क्षेत्र के अतिरिक्त अपनी अन्तर्राष्ट्रीय आकांक्षाओं की पूर्ति करने का भरसक प्रयत्न किया है। भारत की स्वयं की इच्छा रही है कि विश्व उसे एक शक्ति के रूप में पहिचाने या मान्यता दे। इस आकांक्षा की पूर्ति पहली बार उस समय हुई जब भारत–पाक युद्ध (1965) के समझौते के लिये ताशकंद वार्ता हुई और रूस ने भारत की शक्ति को स्वीकार किया। उसके बाद अमरिका ने भारत के प्रभाव तथा प्रभावी भूमिका को राष्ट्रपति काटंर ने मान्यता दी।

यह कहना कि भारत की पर्वतीय नीति में एकरूपता थी इस कथन में सत्यता नहीं है, वरन भारत की नीति को 'टुकड़ों' की संज्ञा दी जाये तो अधिक ठीक होगा। भारत की प्रारम्भ से नीति का स्वरूप इस प्रकार का रहा जिसके अन्तर्गत समस्त हिमालयी राज्या अलग–अलग तरीके से भारत की ओर निर्भरता भरी निगाहों से देखते रहे। इसके पीछे एकमात्र यही इच्छा तथा उद्देश्य रहा है कि भारत के अतिरिक्त कोई भ्रौर बड़ा देश उक्त पर्वतीय राज्यों पर प्रभाव रखने की नियत से आगे न बढ़े। अलग–अलग तरीके से संपर्क रखने की नीति ने पर्वतीय राज्यों के बीच एक संगठित दृष्टिकोण को

उभरने के लिये कोई अवसर नहीं छोड़ा। भूटान–नैपाल के दर्जे को प्राप्त करने की शिकायत करता रहा और सिक्किम की शिकायत भूटान के दर्जे को प्राप्त करने की रही। सिक्किम का भारत में विलय भी निसंदेह इसी कारण हुआ। यह बात दूसरी है कि परिस्थितियां कैसी थीं और राष्ट्रवाद का दृष्टिकोण क्या था है। उक्त नीति के आधार पर भारत पर्वतीय राज्यों पर येन–केन–प्रकरण अपना प्रभाव रखता रहा। भारती की सुरक्षा के परिधि में पर्वतीय नीति चलती रही।

विषय–पृष्ठभूमि

भारत की पर्वतीय नीति को समझाने के लिये इतिहास के कुछ पन्नों पर नजर डालनी होगी। विशेष रूप से अंग्रेजों की एक पैनी दर्षष्टि का भी विश्लेषण करना आवश्यक है। 18 वीं शताब्दी से नैपाल, भूटान तथा सिक्किम ने बफर स्टेट की भूमिका अदा की है। बफर की स्थिति कुल मिलाकर अधिक शोचनीय होती है। दो देशों के बीच फंसे पर्वतीय राज्यों का मनोवैज्ञानिक भय तथा शंका का हो जाना भी कोई आश्चर्य नहीं। नैपाल की 'शान्ति का क्षेत्र' मांग में अंशतः औचित्य है और भूटान की निरन्तर माँग यही है कि 1949 की संधि में उचित संशोधन किया जाय। सिक्कम ने तो अपनी मांग का आग्रह कर परिणाम भुगत लिया है जो हो गया उसकी चर्चा करना ही व्यर्थ है लेकिन मांग के रखने का परिणाम सिक्किम के विरूद्ध गया। यहाँ प्रश्न इतना ही है कि अंग्रेजों के द्वारा अलग–अलग की गई संधियों को 1947 के बाद भारत ने उन प्रावधानों को ज्यों का ज्यों रखना क्यों उचित समझा? कम से कम पर्वतीय राज्यों का दृष्टिकोण निसंदेह भारत के दृष्टिकोण से एकदम विपरीत है।

राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान अंग्रेजों ने भारत में एक तीसरी शक्ति के निर्माण करने का प्रयास किया। भारतीय राजनीति में तीसरी शक्ति के निर्माण का विचार केवल इसलिए था जिससे राष्ट्रीय आन्दोलन सफलता की मंजिल को प्राप्त न कर सके। भारत में अंग्रेजों द्वारा Princly States का प्रावधान एक तीसरी शक्ति ही थी जिससे रियासती सभी नरेश अंग्रेजों को समर्थन देते रहें और आन्दोलन में बिखराव आ जाय। इसका परिणाम यह हुआ कि कांग्रेस पार्टी के अन्दर एक आक्रमक तपका उभर कर आया जिसका मत था कि ^Native States^ में एक क्रान्तिकारी कार्यवाही हो जिससे आन्दोलन एकता के सूत्र में बंधा रहे। लोकप्रिया राष्ट्रवादी विचारधारा, जो कि कानूनी बारीकियों से तनिक भी भिन्न नहीं थे, यही थी कि 'भूटान, नैपाल, कश्मीर तथा सिक्किम' सभी Native States है जिनको भारत में सम्मिलित करना अनुचित नहीं होगा। राष्ट्रवादी विचारधारा एक विशाल भारत के निर्माण की बात सोचने लगा जो अफगानिस्तान से बर्मा तथा हिमालय से कन्याकुमारी की समस्त भूमिखंड भारत में मिला भी जाये। इस प्रकार के विभिन्न मत सामने आते रहे और वह दिन भी आया जब भारत 1947 में स्वतंत्र हुआ।

स्वतंत्रता के तुरन्त बाद भारत सरकार ने पर्वतीय राज्यों से समझौता लगभग उसी प्रकार का किया जो अंग्रेजों ने किया था। विभिन्न संधियों का स्वरूप वही रहा और एक बार फिर से तीनों पर्वतीय राज्य भारत से किसी न किसी प्रकार प्रतिबन्धित हो गये। जब भारत स्वतंत्र हुआ और अंग्रेजी शासक भारतीयों के हाथों में बागडोर थमा रहे थे। उस समय पर्वतीय राज्यों का भविष्य भी उसमें सन्नहित था। उस समय नैपाल, भूटान तथा सिक्किम के प्रशासकों ने अपनी सार्वभौमिकता को सुदृढ़ रखने की मांग की और अपने दर्जों को कायम रखने के लिये बाहरी देशों से संरक्षणता लेने की भी चेतावनी दी। नैपाल व भूटान दोनों देशों ने इससे सम्बन्धित मसले को लेकर चीन से भी संपर्क

किया। नैपालने अपने अस्तित्व को उभारनेके उद्देश्य से अमेरिका से कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित कर लिये। 1947 में पहली एशियायी सम्मेलन नई दिल्ली में हुआ। नेहरू जी ने नेपाल व भूटान दोनों को आम सम्मेलन में शामिल होने के लिये आमंत्रित किया था। दोनों ने ही इस अवसर का लाभ उठाने के उद्देश्य से विदेशी शिष्टमंडल से संपर्क किये और उनसे अपनी समस्या को सामने रखा परन्तु इस प्रकार की चर्चाओं को कोई लाभ न मिल सका।

भारत की पर्वतीय राज्यों के प्रति नीति का निरन्तर एक ही दृष्टिकोण सर्वोपरि रहा कि विरासत में लिया गया प्रभुत्व समाप्त नहीं करना है। ठीक इसके विपरीत, नैपाल व भूटान का सतत यही प्रयत्न रहा कि अपने अस्तित्व को अन्तर्राष्ट्रीय दर्जा हासिल करना है। इस अभियान में सिक्किम शामिल नहीं हो पाया। जब उसने प्रयास किया तो परिणाम सामने आ गया (1974 में सिक्किम का भारत में विलय) उनमें से एक रास्ता तो यह रहा है कि अन्य देशों से कूटनीतिक संबंध स्थापित करें या बाहरी देशों में आर्थिक सहायता प्राप्त करना या कुछ महत्त्वपूर्ण अवसरों (यानी राज्याभिषेक) पर बड़ी शक्तियों के सामने कुछ इस प्रकार का आयोजन करना जिसमें उनका अलग ही व्यक्तित्व भक्लके आदि या अपने देश की अलग से टिकिट जारी करना अपने देश का वक्त भारत का समय 1/2 घंटा आगे पीछे कर देना अथवा भारतीय माल को प्रोत्साहन न देकर दूसरे देशों के माल का आयात करना। उक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि पर्वतीय राज्यों ने 1962 के बाद से इस प्रकार की तरकीबें निकाली जिससे उनका दबा हुआ व्यक्तित्व ऊपर उठ कर आये। नेपाल ने 1948 में संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता के लिये प्रार्थना की थी और वास्तविक रूप से सदस्यता 1955 में मिली। भूटान को सदस्यता 1971 में मिली, जबकि विश्वसनीय स्त्रोतों से यह जानकारी दी गई कि 1966 में ही तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने गुप्त रूप से वायदा कर लिया था। भूटान ने एक के बाद क ऐसे कदम उठाये जो उसकी अन्तर्राष्ट्रीय आकांक्षाओं की पूर्ति करने वाला था। भूटान कोलंबों योजना का सदस्य बना, अन्तर्राष्ट्रीय डाक संघ का सदस्य बना तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय परिषदों का भी सदस्य बना। यहां तक कि सिक्किम भी नेपाल–भूटान का अनुकरण करने में नहीं चुका यद्यपि उसका दर्जा उन दोनों से कही नीचा था। 1966 में सिक्किम ने अमरिका के प्रोत्साहन पर (श्रीमती गांधी का आरोप था) World Craft Council के सम्मेलन में शामिल हुआ। भारत की आशाऐं पर्वतीय राज्यों से यही रही है कि अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर वे उसकी हां में हां मिलाता रहे। लेकिन आज के सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि भारत की उक्त अपेक्षाओं के लगातार उल्लंघन हो रहा है। कई बार नैपाल–भूटान ने सुंयुक्तराष्ट्र संघ में भारत के साथ समर्थन नही दिया है। उदाहरण के लिये पर्वतीय राज्यों के अधिकारों के मसले, दक्षिण एशिया को आपराविक स्वतंत्र क्षेत्र का मुद्दा था, कंपूचिया या अफगानिस्तान। इन मुद्दों पर नैपाल–भूटान ने भारत का विरोध किया है।

चूंकि तीनों पर्वतीय राज्यों की राजनीतिक व्यवस्था राजतंत्रीय थी इसलिये तीनों में पारस्परिक एकता का हो जाना भी स्वाभाविक था तथा बाहरी विदेशी तत्वों के संपर्क में आने के कारण अन्तर्राष्ट्रीय छवि तथा अस्तित्व के उभरने में अंशतः सहायता मिलती रही है। उदाहरण के लिये भूटान में अंग्रजी डाक्टर्स, अध्यापक, कार्यकर्त्ता तथा फिल्म अभिनेताओं तथा सिक्किम में अमरीकी महिला होपकुक के होने से पर्वतीय राज्यों में विदेशियों के आश्वासन की संख्या बढ़ गई थी। सिक्किम ने तो संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता के लिये बार–बार आवाज भी उठाई थी। यह बात दूसरी है कि अन्तिम परिणाम क्या हुआ?

नैपाल–भूटान की सार्वभौमिक अस्तित्व के उभारने में बाहरी शक्तियों का भी सहयोग रहा है चाहे वह भारत सरकार की इच्छा के विरूद्ध क्यों न हो। विशेष रूप से चीन और प्रछन्नरूप से पाकिस्तान ने पर्वतीय राज्यों के आन्तरिक असन्तोष तथा शिकायतों का लाभ लिया है। दोनों ने ही बाहरी देशों से विविध तरीकों से सहायता लेकर अपनी अन्तर्राष्ट्रीय छवि को ऊँचा करने का प्रयास किया है। भारत की स्वयं की अन्य देशों पर निर्भरता ने पर्वतीय राज्यों को वैसा ही करने के लिए अनुप्रेरित किया। 1971 से भारत की परिवर्तित स्थिति को देखकर, बाहरी शक्तियों ने भी पर्वतीय राज्यों की ओर से उदासीनता का व्यवहार अपना लिया था क्योंकि बांगला देश के जन्म के साथ दक्षिण–एशिया में भारत एक पर्याप्त शक्तिशाली देश के रूप में उभर कर आ गया था और उसे महाशक्तियों ने मान्यता भी दी थी लेकिन बांगला देश की विजय का प्रभाव कुछ वर्षों ही चल पाया और उसके बाद से पर्वतीय राज्यों से भारत का प्रभाव धीरे–धीरे कम होता नजर आता है। जब कभी भारत की आन्तरिक कमजोरियां राजनीतिक व्यवस्था को असन्तुलन की स्थिति में लाई हैं– पर्वतीय राज्यों ने उन स्थितियों का पूरा–पूरा लाभ लिया है। उदाहरण के लिये जनता पार्टी के प्रशासन के दौरान जिस प्रकार अस्तव्यस्तता तथा अनिश्चितता की स्थिति पैदा हुई इन क्षणों में पर्वतीय राज्यों ने अन्य शक्तियों को सहायता से अपनी सार्वभौमिक शक्ति को उभारने का प्रयास किया है। विशेष रूप से 1980 के बाद से भूटान ने अपने दृष्टिकोण में भारी परिवर्तन किया है। 1980 से आज तक लगभग भूटान ने 14 देशों से कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित कर लिये है तथा भारत पर शत–प्रतिशत निर्भरता को घटा कर 77% पर ले आये है। संयुक्त राष्ट्र संघ की संस्थाओं से आर्थिक सहायता लेने से भूटान में आर्थिक विकास तीव्रगति से हो रहा है। भूटान कई अन्तर्राष्ट्रीय मसलों पर संयुक्त राष्ट्र संघ में अपना मत भारत के विरोध में देने से कोई संकोच का भाव प्रदर्शित नहीं करता। धीरे–धीरे भारत पर किन्हीं क्षेत्रों में निर्भरता को भूटान कम करने के प्रयास है।

चीन की निरन्तर प्रतिकूल नीतियों ने भी भारत की सशक्त भूमिका पर प्रभाव डाला है। चीन ने प्रारम्भ से भारत का पर्वतीय राज्यों पर प्रभाव की सहायता नहीं दी। भारत–चीन के अच्छे सम्बन्धों के दौरान भी चीन की निजी इच्छा यही रही कि भारत के प्रभाव को किसी न किसी प्रकार कम करता है और इस निरन्तरता के प्रयास ने चीन को जब तक सफलता प्रदानकी है। आज के सन्दर्भ में पर्वतीय राज्यों (नैपाल–भूटान) की भूमिका को देखकर संकेत अवश्य मिलता है कि भारत का पर्वतीय राज्यों से प्रभाव घूमिलहो रहा है।

निष्कर्ष

भारत की नीति भी यही रही कि पर्वतीय राज्यों पर अपना प्रभुत्व कम नहीं करना है। यद्यपि दूसरी ओर से प्रयासों को विफल करने के प्रयत्न बराबर जारी रहे। अपनी सार्वभौमिक स्वतंत्रता को अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उभारने के प्रयासों में धीरे–धीरे सफलता की झलक मिलने लगी। विशेष रूप से 1960 के बाद जब भारत–चीन के संबंध कटु होते होते युद्ध में परिवर्तन हो गया। 1962 के युद्ध के दौरान तीनों पर्वतीय राज्यों ने भारत की कमजोरी का अधिकतम लाभ लेने का प्रयास किया। उन क्षणों में साफ जाहिर होने लगा कि भारत का प्रभाव पर्वतीय राज्यों पर धीरे–धीरे कम हो रहा है।

ग्राम को आमतोर से कहा जाता रहा है कि पर्वतीय राज्यों ने 1962 के चीन के साथ युद्ध के दौरान अधिकतम लाभ भारत से लेने की कोशिश की और कोशिश में कामयाब भी रहे। ऐसा भी कहा जाता है कि चीन की सहायता से भी भारत ने परिस्थितियों के दवाब में पर्वतीय राज्यों को

विवशता में रियासतें दी है। लेकिन कभी ऐसा भी हुआ है कि बिना बाहरी सहायता लिये नैपाल–भूटान को अपने अन्तर्राष्ट्रीय अस्तित्व को आगे लाने में जब तब सफलता मिली है। पर्वतीय राज्यों को अपने अस्तित्व की पूर्ण सुरक्षा के कभी–कभी विभिन्न चतुराईयां या रास्तों को अपनाना पड़ा है।

सन्दर्भ

1. श्री कान्त दत्त भारत तथा हिमालयी राज एशियन ऐफेयर्स फरवरी 1980
2. बी.पी.मैनन The integration of Indian states-London,1956
3. Asian Relations Conference-March April,1947 report of proceeding New Delhi 1948
4. Asian Survey vol. XVII No 2-Feb, 1978
5. आर.सी. मिश्र भारत भूटान संबंध
6. Sikkim Join the Mother Land (1977)
7. India's Aid to Bhutan, SAN Jamp (1082)
8. India's Allition to Bhutan
9. राममनोहर लोहिया धरती माता (1983)
10. Kuensel (Bhutan Weekly Bulletin) – 1980-86
11. भारत की पर्वतीय राज्यों के प्रति नीति (भूटान के सन्दर्भ में) प्रो.आर.सी.मिश्रा